गुरु पूर्णिमा विचार प्रवाह
गुरु शिष्य सम्बन्धों का आधार

गुरु - तत्व आकर्षण

गुरु के प्रति आकर्षण - समर्पण से ही जीवन का अज्ञान रूपी अंधकार समाप्त होता है और गुरु ज्ञान की ज्योति में शिष्य सदैव उज्जवल ओजस्वी बनता है।

संसार में शक्ति के दो रूपों की व्याख्या होती है। एक है प्रकृति और दूसरा है गुरु। इस विषय पर भारतीय ऋषियों ने निरन्तर अनुसंधान किये और पहले द्वैत सिद्धान्त का परिचालन हुआ कि जगत का आधार प्रकृति और पुरुष है। दोनों अलग-अलग तत्व है। आगे और ऋषियों ने अनुसंधान किया और शंकराचार्य ने अद्वैत का सिद्धान्त दिया और यह स्थापित किया कि प्रकृति और पुरुष एक ही है और दोनों मिलकर पूर्णत्व को स्थापित करते है।

प्रकृति के बिना पुरुष का रहना संभव नहीं है और पुरुष के बिना प्रकृति अधूरी है और इस परिपालना में उन्होंने **'अहम् ब्रह्मास्मि...'** का सिद्धान्त प्रतिपादित किया और कहा कि केवल मनुष्य शरीर ही नहीं, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रकृति और पुरुष के मिलन का स्वरूप है।

आज के वैज्ञानिक आधार पर चर्चा करें तो यह माना जाता है कि लाखों-करोड़ों वर्ष पहले सृष्टि में कुछ भी नहीं था। सर्वत्र अंधकार था और फिर सूर्य की उत्पति हुई और सूर्य ने पूरे समुद्र से आप्लावित जल रूपी पृथ्वी को सुखाना प्रारम्भ किया और जिससे पृथ्वी ग्रह का निर्माण हुआ और यह प्रक्रिया चलती रही। करोड़ों-करोड़ों वर्षों बाद भी आज भी पृथ्वी का करीब 65-70 प्रतिशत भाग जल है और बाकी भूभाग ठोस भूमि है।

भारतीय मनीषियों ने भी सूर्य को जगत की आत्मा कहा है और वेदों में लिखा है -

'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च...'

सूर्य ही जगत की आत्मा का स्वरूप है।

प्रकृति का सीधा अर्थ सामान्य बोलचाल भाषा में हजारों रूपों में प्रकट किया जाता है। वायु, जल, बादल, आकाश, पृथ्वी के अलावा विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधों को भी प्रकृति की संज्ञा दी गई।

प्रकृति का क्षेत्र अत्यन्त विशाल है। मनुष्य जीवन में प्रकृति को **'स्वभाव'** से जोड़ा गया है और यह कहा गया है कि संसार के प्रत्येक मनुष्य, जीव-जन्तु की प्रकृति अलग-अलग होती है। हम जानवरों की भाषा समझते नहीं है इसीलिये जानवरों की प्रकृति का पूर्ण विश्लेषण नहीं कर पाते है।

मनुष्य की प्रकृति

अब मनुष्य में प्रकृति क्या है? उसका स्वभाव, उसका चरित्र, उसकी कार्यशैली, उसकी बुद्धि, विवेक, क्षमता, ज्ञान, प्रेम, घृणा, शौर्य, ईर्ष्या, द्वेष उसकी प्रकृति है।

एक विशेष बात यह है कि संसार में कोई भी जीव-जन्तु एकाकी नहीं रहता है। चाहे भेड़-बकरी हो, गाय हो, जीव-

जन्तु हो, शेर हो, हाथी हो, यहां तक की वृक्ष भी हो, कोई भी एकाकी नहीं रहता। अपनी ही प्रजाति के साथ आकर्षण में बंधा हुआ होता है।

मनुष्य भी इसीलिये समाज में रहता है, एक समूह के रूप में रहता है और एक दूसरे के प्रति आकर्षित रहते है। यदि कोई भेद है, विकर्षण है तो वह भी आकर्षण का ही स्वरूप है।

विचारणीय बात है कि किस कारण से लाखों-लाखों, करोड़ों वर्षों से सारे ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते है। चन्द्रमा, पृथ्वी की परिक्रमा करता है, शनि के उपग्रह टाईट, एन्सेलाडस इत्यादि शनि की परिक्रमा करते है।

आकर्षण शक्ति सर्वोपरि है

इस सिद्धान्त के अनुसार यह सर्वमान्य सिद्धान्त स्थापित होता है कि संसार की सबसे बड़ी शक्ति आकर्षण की शक्ति है। इसीलिये कोई भी व्यक्ति एकांकी नहीं हर सकता है। स्त्री को पुरुष के प्रति और पुरुष को स्त्री के प्रति आकर्षण होता है। दोनों के मिलन से सृष्टि में नवीन संरचना और यही आकर्षण का विस्तार समाज, राष्ट्र और पूरे भूमण्डल का निर्माण करता है। इसीलिये हमारे शास्त्रों में **वसुधैव कुटुम्बक...** का सिद्धान्त स्थापित हुआ है कि इस वसुधा अर्थात् धरती पर रहने वाले सभी प्राणी, जीव-जन्तु, वनस्पति एक कुटुम्ब के समान है।

शक्ति प्रकृति सर्व विद्यमान

संसार में प्रत्येक व्यक्ति जिसमें ईश्वर ने शक्ति अर्न्तनिहित कर दी है वह अपनी शक्ति का और अधिक प्रसार करना चाहता है। इसी कारण नये अनुसंधान होते है और शक्ति विस्तार के कारण ही पाषाण युग से लेकर वर्तमान युग तक संस्कृति का विकास हुआ है। यह विकास का क्रम निरन्तर चलता ही रहेगा, जब तक पुनः प्रलय न हो जाये और यह प्रलय कब होगा? किसी को जानकारी नहीं है, कोई निश्चित तौर पर यह नहीं बता सकता है कि पृथ्वी कब तक रहेगी।

जब तक पृथ्वी है, तब तक पृथ्वी पर प्रत्येक प्राणी ईश्वर द्वारा प्रदत्त अपनी आयु जीता रहेगा। ईश्वरीय विधान बहुत स्पष्ट है, उन्होंने मनुष्य के लिये 80-100 वर्ष, गाय के लिये 15-25 वर्ष, घोड़े के लिये 25-30 वर्ष, हाथी के लिये 50-70 वर्ष, कछुआ 100-150 वर्ष तक जीता है तो पूर्णायु कही जाती है।

क्या केवल जीना ही पर्याप्त है?

निश्चित रूप से यही उत्तर प्राप्त होगा कि केवल जीना अर्थात् श्वास लेना और देह की दैनिक क्रियाएं करना पर्याप्त नहीं है। जीवन में शक्ति का और अधिक विस्तार होना ही चाहिये, निरन्तर अभिवृद्धि होनी चाहिये।

आकर्षण शक्ति का विस्तार

इन सबके मूल में क्या है? इन सबके मूल में है आकर्षण की शक्ति। यह आकर्षण केवल वासनात्मक शक्ति नहीं है। यह आकर्षण ईश्वरीय वरदान है। जिस तत्व के पूर्ण जाग्रत होने पर मनुष्य अपने जीवन की बाधाओं का शमन कर सकता है, अपने जीवन को उर्ध्वगति प्रदान कर सकता है।

सामान्य भाषा में कहा जाये तो स्पष्ट है कि प्रत्येक मनुष्य को आकर्षण शक्ति से जुड़ना ही पड़ता है। कोई भी जीव-जन्तु, मनुष्य गहरे अंधकार में पूरा जीवन नहीं जी सकता है, यहां तक कि एकाकी जीवन भी नहीं जी सकता है।

प्रकृति का आकर्षण है, जगत की आत्मा सूर्य के प्रति और यह सूर्य के दो स्वरूप है। एक सूर्य जो हमें दृश्यमान होता है, वह स्थिर है, हमारी पृथ्वी ही उसके चारों ओर परिक्रमा करती है। एक ओर सूर्य जो मनुष्य के मन में स्थित है वह निरन्तर प्रेरणा और शक्ति प्रदान करता रहता है और यह प्रेरणा और शक्ति किस दिशा में जाये यह मनुष्य के बुद्धि और विवेक पर निर्भर करता है। इसीलिए मनुष्य ने विनाशाकारी परमाणु बम भी बनाये और इसी परमाणु शक्ति से बिजलीघरों का निर्माण भी किया। अर्थात् हम शक्ति को जिस रूप में ले जाना चाहे, वह उस रूप में जा सकती है।

ज्ञान और शक्ति का आकर्षण भाव

इतना तो निश्चित है कि शक्ति को एक विशेष दिशा निर्देश चाहिये, प्रकृति अर्थात् शक्ति कभी भी अपनी इच्छानुसार क्रियाशील नहीं होती है। उसे ज्ञान रूपी सूर्य के द्वारा एक निश्चित दिशा देनी पड़ती है। गुरु प्रार्थना है -

ॐ अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

इस श्लोक का भावार्थ बहुत महान् है, गुरु मनुष्य जीवन में सूर्य है, जो उसके अज्ञान रूपी अंधकार को समाप्त करते है, नाश करते है।

अंधकार तो किसी को अपने जीवन में नहीं चाहिये। अंधकार में सारी शक्तियां सुप्त हो जाती है। प्रकाश तो सबको चाहिये और ईश्वरीय प्रतिरूप मनुष्य को निरन्तर अपने से बड़ी शक्ति का प्रसार चाहिये।

गुरुत्वाकर्षण शक्ति : गुरु तत्व आकर्षण

आलेख के प्रारम्भ में जिस शक्ति का विवेचन किया गया है वह गुरुत्वाकर्षण की ही शक्ति हैं।

गुरुत्वाकर्षण का अर्थ है गुरु के आकर्षण चक्र में रहना और यह पृथ्वी के सभी ग्रह निरन्तर कर रहे है।

मनुष्य जीवन में भी गुरु का आगमन सूर्योदय के समान है। जब वह अपनी निद्रा, आलस्य को त्याग कर गुरु रूपी प्रकाश में स्वयं अपने आपको देखता है, विश्लेषण करता है और यह विचार करता है कि मुझे अपने जीवन को क्या दिशा देनी है। तो आवश्यक है कि गुरु के प्रति आकर्षण शक्ति को तीव्र से तीव्रतम बनाया जाये। यदि एक व्यक्ति चाहे वह साधक हो, शिष्य हो गुरुत्वाकर्षण अर्थात् गुरु तत्व आकर्षण से छूट जाता है तो वह संसार के भंवर जाल में दिशाहीन, निरुद्देश्य जीवन जीता है। न उसे अपनी गति का ध्यान है, न लक्ष्य का। ऐसा व्यक्ति एक फुटबॉल की तरह संसार सागर में इधर से उधर ठोकरें खाता है। हर व्यक्ति उस पर प्रहार करता रहता है।

शिष्य का संकल्प

जब कोई शिष्य-साधक गुरु को धारण करता है तो वह एक मानसिक संकल्प लेता है कि हे गुरुदेव! मैं आपके प्रति अपने आकर्षण को और अधिक तीव्र बनाता रहूंगा। मेरी दिल की इच्छा है कि मैं संसार में निरुद्देश्य जीवन नहीं जीऊ।

मुझे आपके आकर्षण के प्रभाव से निरन्तर दिशा निर्देश प्राप्त होता रहे और यह दिशा निर्देश मानसिक, वाचिक और लिखित भी हो सकता है।

गुरु शिष्य के मानस में प्रवेश कर उसे दिशा निर्देश देते है। शास्त्रों में इसे ही इसे शक्तिपात कहा गया है।

जब उच्च शक्ति, निम्न शक्ति को तीव्रता प्रदान कर उसकी प्रकृति को निर्देशित करती है तो निम्न शक्ति उर्ध्वमुखी होकर उच्चता को प्राप्त करती है।

जिस प्रकार सूर्य स्थिर है उसी प्रकार गुरु भी शिष्य के जीवन में स्थिर है। कर्त्तव्य है तो केवल शिष्य और साधक का कि वह गुरु तत्व आकर्षण में कितना अधिक जुड़ा हुआ है। इस जुड़ाव का स्तर भावनात्मक भी होता है, बौद्धिक भी होता है और इसमें आदेश भी होता है। शरीर दृश्यमान होता है इस कारण शरीर का शरीर से जुड़ाव स्पष्ट दिखाई देता है और उस स्पष्ट प्रभाव को शिष्य सहज ग्रहण कर सकता है। इसीलिये दर्शन, वचन और कर्म को **'मनसा वाचा कर्मणा...'** कहा गया है और इन तीन से ही साधक के जीवन की दिशा निर्धारित होती है।

सदैव स्मरण करो : गुरु मेरे जीवन के सूर्य

प्रत्येक व्यक्ति को निरन्तर आत्म विश्लेषण करते रहना चाहिये कि मेरे जीवन के सूर्य गुरु है और इस गुरु तत्व के आकर्षण में कितना जुड़ कर सकता हूं। जिस प्रकार सूर्य पृथ्वी को सदैव अपने आकर्षण में गतिशील रखते है। गुरु भी अपने आकर्षण में मुझे निरन्तर गतिशील रखें।

मूल बात यह है कि प्रत्येक मनुष्य का निर्माण प्रकृति से ही हुआ है और उनके अन्तर्मन में प्रकाश गुरु ही करते है। गुरु अपना ज्ञान, तेज, शक्ति शिष्यों को प्रदान करते रहते है।

जिस व्यक्ति के जीवन में गुरु नहीं है, गुरु तत्व आकर्षण नहीं है वह व्यक्ति मनुष्य तो अवश्य है। पर उसमें ज्ञान का तेज नहीं है और ज्ञान के तेज बिना संसार सागर में यात्रा अत्यन्त कठिन हो जाती है। जब तक गुरु का तेज, गुरु का आकर्षण और गुरु का प्रकाश किसी के जीवन में रहता है तब उसके जीवन में कोई अंधकार नहीं आता। अंधकार का दूसरा नाम है - निराशा, हताशा, पराजय, कर्महीनता, आलस्य, प्रमाद इत्यादि-इत्यादि।

गुरु ही शिष्य के जीवन व्याप्त अंधकार को समाप्त कर उसके जीवन में आशा, उत्साह और कर्म को जाग्रत करते है।

यही गुरु-शिष्य सम्बन्धों का सारभूत स्वरूप है।